अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र : अर्थ एवं प्रकृति

[INTERNATIONAL ECONOMICS : MEANING AND NATURE]

Unit-1

वर्तमान समय में आवागमन के बढ़ते हुए साधनों ने पूरे विश्व को एक इकाई के रूप में बदल दिया है। अब वे दिन समाप्त हो गये जब प्रत्येक देश केवल अपने आप तक सीमित था तथा बाहर की दुनिया का उसे कोई ज्ञान नहीं था। उस समय एक देश के नागरिक केवल उन्हीं वस्तुओं का उपभोग कर सकते थे जो उस देश में पैदा की जाती थीं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विशिष्टीकरण नाम की कोई चीज नहीं थी तथा प्रत्येक देश अपनी आवश्यकता की प्राय: सभी वस्तुएं स्वयं उत्पन्न करने का प्रयत्न करता था किन्तु किसी भी वस्तु के उत्पादन में उसे विशिष्टता अथवा निपुणता प्राप्त नहीं थी। अब स्थिति सर्वथा भिन्न है। आज बढ़ते हुए श्रमविभाजन एवं विशिष्टीकरण ने प्रत्येक देश को किसी विशेष वस्तु के उत्पादन में निपुणता एवं विशिष्ट योग्यता प्रदान की है। यह इसलिए सम्भव हुआ कि अब विभिन्न देशों के बढ़ते हुए आर्थिक सम्बन्धों ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को एक नयी दिशा दी है। जिस प्रकार एक व्यक्ति उसी वस्तु का उत्पादन करता है जिसमें वह सर्वाधिक निपुण होता है, उसी प्रकार एक राष्ट्र भी उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करता है जो वह कम तुलनात्मक लागत पर उत्पन्न कर सकता है। इस प्रकार उत्पादन में आन्तरिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर विशिष्टीकरण महत्वपूर्ण हो गया है। विशिष्टीकरण के फलस्वरूप बढ़े हुए उत्पादन का उपभोग उत्पादक स्वयं नहीं करता वरन् उसका विनिमय करके ऐसी वस्तु प्राप्त करना चाहता है जिसे वह बनाने में निपुण नहीं है। अत: विशिष्टीकरण व्यापार को जन्म देता है और व्यापार से विशिष्टीकरण को प्रोत्साहन मिलता है। जब यही व्यापार देश की सीमाओं को लांघ जाता है तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का जन्म होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की परिभाषा

(DEFINITION OF INTERNATIONAL ECONOMICS)

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **एल्सवर्थ** (P. T. Ellsworth) ने अपनी पुस्तक *'The International Economy'* में बड़े सरल ढंग से अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की संक्षिप्त परिभाषा दी है। वे कहते हैं कि जिस प्रकार अर्थशास्त्र की परिभाषा यह कहकर की जाती है कि "अर्थशास्त्र वह है जो अर्थशास्त्री करते हैं" उसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का सम्बन्ध भी विभिन्न राष्ट्रों के आपसी आर्थिक सम्बन्धों से है। जब दो देश आपस में व्यापार करते हैं तो उनमें आर्थिक सम्बन्धों की शुरूआत होती है और इनके कारण कुछ आर्थिक समस्याएं भी पैदा होती हैं। अत: अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र में इन्हीं आर्थिक सम्बन्धों एवं उनसे उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

प्रो. हैरड (Harrod) के अनुसार, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एक विस्तृत और जटिल विषय है, इसका सर्वेक्षण ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक दृष्टिकोण से किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जा सकता है कि किसी देश में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रमुख घटक कौन-कौनसे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र को परिभाषित करते हुए प्रो. हैरड कहते हैं कि "**अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का सम्बन्ध उन समस्त आर्थिक सौदों से है जो देश की सीमा के बाहर किये जाते हैं।**"[1]

वासरमेन एवं **हल्टमेन** (Wasserman and Hultman) के अनुसार, "**अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का सम्बन्ध वस्तुओं, सेवाओं, उपहारों, पूंजी व बहुमूल्य धातुओं के विनिमय से है जिसमें इन मदों का स्वामित्व एक देश के**

[1] "International Economics is concerned with all economic transactions involving passage across a national frontier." —Sir Roy Harrod, *International Economics*, 1960, p. 4.

निवासियों से दूसरे देश के निवासियों को हस्तान्तरित हो जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र उन कानूनों, संस्थाओं एवं व्यवहारों का वर्णन तथा विश्लेषण करता है जिनके अन्तर्गत व्यापार किया जाता है।''[1]

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की एक सरल परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है : ''**अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, सामान्य अर्थशास्त्र की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत विभिन्न देशों के बीच व्यापार से पैदा होने वाले आर्थिक सम्बन्धों एवं उनसे सम्बन्धित आर्थिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।''**

अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की पृष्ठभूमि
(BACKGROUND OF INTERNATIONAL ECONOMICS)

जिस प्रकार एक व्यक्ति पूर्णरूप से आत्मनिर्भर नहीं रह सकता, उसी प्रकार एक राष्ट्र भी पूर्णरूप से आत्मनिर्भर होने का दावा नहीं कर सकता। आज हम भले ही यह कहें कि प्राचीन युग में मनुष्य स्वयं अपनी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था, किन्तु वास्तविकता तो यह है कि उस युग में भी कुछ न कुछ मात्रा में विशिष्टीकरण था, यद्यपि वह अवैज्ञानिक एवं प्रारम्भिक किस्म का था। आज तकनीकी विकास और वैज्ञानिक खोजों ने पूर्ण विशिष्टीकरण सम्भव बना दिया है। अतः एक देश उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करता है जिसकी तुलनात्मक लागत कम होती है एवं इन वस्तुओं का विनिमय करके दूसरे राष्ट्रों से उन वस्तुओं को खरीदता है जिन्हें वह या तो अपने देश में तैयार नहीं कर सकता अथवा बहुत ऊंची लागत पर तैयार कर सकता है। प्रारम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की मात्रा देश के कुल उत्पादन की तुलना में प्रायः नगण्य हुआ करती थी किन्तु गत वर्षों में इसमें उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है तथा प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था में इसका महत्वपूर्ण स्थान हो गया है।

वस्तुओं के आयात-निर्यात के साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विस्तार हुआ। वस्तुओं में मशीनों, उपकरणों एवं औजारों, श्रम तथा पूंजी का आयात-निर्यात भी प्रारम्भ हुआ जिसने राष्ट्रों के आर्थिक विकास को प्रभावित किया। 17वीं शताब्दी में सर्वप्रथम वणिकवादियों (Mercantalists) ने विदेशी व्यापार (विशेषकर निर्यात) पर बल दिया। वणिकवादियों ने निर्यात बढ़ाने एवं आयात घटाने में सफल राष्ट्र को शक्तिशाली राष्ट्र की श्रेणी में रखा। 18वीं शताब्दी के आरम्भ में यद्यपि प्रकृतिवादियों (Physiocrats) ने वणिकवादियों की इस विचारधारा का विरोध किया, किन्तु 18वीं शताब्दी के अन्त में प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सिद्धान्त का सूत्रपात एडम स्मिथ द्वारा किया गया, किन्तु बाद में **डेविड रिकार्डो** तथा **जॉन स्टुअर्ट मिल** ने प्रतिष्ठित विचारधारा को आगे बढ़ाया। उन्नीसवीं सदी तक प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने मुक्त अथवा स्वतन्त्र व्यापार का पूर्ण समर्थन किया। उस समय तक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में प्रतिबन्धों का प्रायः अभाव था किन्तु बीसवीं सदी और विशेषकर प्रथम विश्वयुद्ध तथा सन् 1930 की व्यापारिक मन्दी ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में कई प्रतिबन्धों को जन्म दिया जिससे अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों को आघात लगा। वास्तव में, युद्ध और मन्दी की स्थितियों ने राष्ट्रों की अर्थव्यवस्थाओं को पंगु बना दिया और वे संरक्षण की नीति अपनाने लगे, किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का युग समाप्त हो गया। वास्तव में, समय और परिस्थितियों के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों में परिवर्तन हुआ है और उनमें निरन्तर वृद्धि हुई है।

राजनीतिक परिस्थितियों के कारण भी व्यापार के स्वरूप में विशेष परिवर्तन हुआ है। प्रारम्भ में पूंजीवादी व्यवस्था ने इंगलैण्ड का व्यापार बढ़ाने में पर्याप्त सहायता की क्योंकि विश्व के बहुत-से देशों में पूंजीवाद का प्रभाव था, किन्तु आज का विश्व पूंजीवाद और साम्यवाद के दो खेमों में बंटा हुआ है जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी विभिन्न क्षेत्रों में बंट गया है और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की एक नयी विचारधारा का जन्म हुआ है। राजनीतिक उद्देश्यों से प्रभावित होकर व्यापार के क्षेत्र में कई क्षेत्रीय गुटों का जन्म भी हुआ है जिससे सम्बन्धित देशों का व्यापार एक विशिष्ट क्षेत्र तक ही सिमट कर रह गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याएं
(INTERNATIONAL ECONOMIC PROBLEMS)

बढ़ते हुए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है जिनमें मुख्य समस्याएं इस प्रकार हैं :

(1) **क्षेत्रीय बाजारों की स्थापना**—प्रारम्भ में विभिन्न राष्ट्रों के बीच स्वतन्त्रतापूर्वक व्यापार होता था लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् कई क्षेत्रीय बाजारों का निर्माण हुआ। इसके पीछे मुख्य कारण क्षेत्रीयता की

1 Wasserman and Hultman, *Modern International Economics.*

भावना एवं कुछ देशों के हितों का समान होना है। उदाहरण के लिए, पश्चिमी यूरोप के 6 राष्ट्रों (फ्रांस, जर्मनी, इटली, बेल्जियम, नीदरलैण्ड और लक्जेमबर्ग) ने, 1 जनवरी, 1958 को एक सन्धि पर हस्ताक्षर कर **यूरोपीय साझा बाजार** (European Common Market) का निर्माण किया जिसके अन्तर्गत इन देशों ने अपनी अर्थव्यवस्थाओं को एक आर्थिक इकाई में परिवर्तित कर लिया। 1973 में यूरोपियन साझा बाजार में तीन और देश—इंगलैण्ड, डेनमार्क एवं नार्वे शामिल हो जाने से इसकी संख्या 9 हो गयी। बाद में ग्रीस, स्पेन एवं पुर्तगाल देशों को भी संगठन में शामिल किया गया। 1995 में आस्ट्रिया, फिनलैण्ड, स्वीडन देशों के शामिल होने से इस बाजार में सदस्यों की संख्या बढ़कर 15 हो गई। इनका प्रारम्भिक उद्देश्य बढ़ते हुए विशिष्टीकरण और श्रम-विभाजन के लाभों को प्राप्त करना था। यूरोपियन साझा बाजार को अपने उद्देश्यों में पर्याप्त सफलता मिली जिससे प्रभावित होकर अन्य राष्ट्रों ने भी ऐसे क्षेत्रीय गुटों का निर्माण किया। **यूरोपीय स्वतन्त्र व्यापार संघ** (European Free Trade Association—EFTA) का निर्माण किया गया जिसमें यूरोप के वे देश शामिल हुए जो यूरोपीय साझा बाजार में सम्मिलित नहीं होना चाहते थे। इसे बनाने में ब्रिटेन ने पहल की क्योंकि उसे भय था कि यूरोपियन साझा बाजार के कारण उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इस संघ के सदस्य सात देश थे—ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क, नार्वे, पुर्तगाल, स्वीडन एवं स्विटजरलैण्ड। इसका प्रमुख उद्देश्य सदस्य देशों के लिए तटकरों (Tariffs) को हटाना था। बाद में ब्रिटेन, यूरोपीय साझा बाजार में शामिल हो गया। अपने आर्थिक हितों की वृद्धि करने के उद्देश्य से दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में भी एक साझा बाजार स्थापित करने की योजना विचाराधीन है जो यूरोपीय साझा बाजार के समान ही होगा।

इन क्षेत्रीय गुटों के निर्माण का प्रभाव यह हुआ है कि जो राष्ट्र इनके सदस्य नहीं हैं, उनका व्यापार बहुत ही प्रतिकूल ढंग से प्रभावित हुआ है क्योंकि इनके लिए व्यापार की सारी रियायतें बन्द कर दी गयी हैं अथवा तटकरों को बहुत बढ़ा दिया गया है। इससे एक बड़ी समस्या यह पैदा हुई है कि अब अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए पूरा विश्व एक इकाई न रहकर अलग-अलग क्षेत्रों में बंट गया है जिससे अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों में तनाव पैदा हुआ है।

(2) **अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक समस्याएं** (International Monetary Problems)—जब दो भिन्न राष्ट्रों में व्यापार होता है तो विदेशी विनिमय की समस्या पैदा होती है। इस समस्या के हल के लिए 1945 में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की स्थापना की गयी किन्तु अभी भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई मौद्रिक समस्याएं बनी हुई हैं जिनका हल नहीं किया जा सका है। अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली के सुधारने के लिए समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा प्रयत्न किये गये। विशेष आहरण अधिकार (SDR) का प्रयोग 1969 से आरम्भ किया गया, किन्तु वांछित सफलता नहीं मिली। (आगे चलकर "अन्तर्राष्ट्रीय तरलता" नामक अध्याय में इन मौद्रिक समस्याओं का विवेचन किया गया है।)

(3) **अर्द्धविकसित देशों के आर्थिक विकास की समस्या** (Problem of Economic Development of Underdeveloped Countries)—आज पिछड़े देशों के सामने सबसे प्रमुख समस्या आर्थिक विकास करने की है। विकसित देशों के सम्पर्क ने अर्द्धविकसित देशों की विकास की लालसा को और अधिक तीव्र बना दिया है, किन्तु यह आर्थिक विकास केवल पिछड़े देशों की चिन्ता का विषय नहीं है, वरन् विकसित देश भी इन देशों के आर्थिक विकास में पूर्ण रुचि ले रहे हैं क्योंकि विश्व के किसी भी भाग में निर्धनता समृद्धि के लिए खतरा सिद्ध हो सकती है, किन्तु महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि ये पिछड़े देश किस प्रकार विकसित देशों से पूंजी और तकनीकी सहायता लेकर अपना आर्थिक विकास कर सकते हैं। प्रायः विकसित देश पिछड़े देशों को ऐसी शर्तों पर ऋण देते हैं जो गरीब देशों के लिए भारी पड़ते हैं, विकसित राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय आय का एक प्रतिशत भी गरीब देशों की सहायता के लिए प्रयुक्त करें तो काफी हद तक आर्थिक विकास की समस्या सुलझाई जा सकती है, किन्तु यह दुख की बात है कि विकसित देश इसके लिए तैयार नहीं हैं। विकसित देश तो संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित अपने सकल घरेलू उत्पाद का 0.7 प्रतिशत भी देने को तैयार नहीं हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, सामान्य अर्थशास्त्र की शाखा के रूप में
(INTERNATIONAL ECONOMICS AS A BRANCH OF GENERAL ECONOMICS)

यद्यपि आज अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र का पृथक् अस्तित्व माना जाने लगा है, किन्तु यह सामान्य अर्थशास्त्र की एक शाखा है, कोई पृथक् विज्ञान नहीं है। **चार्ल्स पी. किण्डल बर्जर** के अनुसार, "अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सामान्य अर्थशास्त्र का एक विशेष सन्दर्भ में अध्ययन है।" जिस प्रकार सामान्य अर्थशास्त्र के अन्तर्गत विभिन्न

शाखाएं हैं; जैसे—सांख्यिकी, मौद्रिक अर्थशास्त्र, विकास का अर्थशास्त्र, इत्यादि, इसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र भी सामान्य अर्थशास्त्र की ही एक शाखा है। जहां सामान्य अर्थशास्त्र में हम विभिन्न आर्थिक सिद्धान्तों एवं उनके व्यावहारिक पहलुओं का विश्लेषण करते हैं वहीं अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र में हम उन आर्थिक लेन-देनों की व्याख्या करते हैं जो विदेशों के साथ किये जाते हैं। इन आर्थिक लेन-देनों का उदय इसलिए होता है क्योंकि विभिन्न देश आपस में व्यापार करते हैं। एक देश में रहने वाले लोगों में जो आर्थिक लेन-देन किया जाता है, उसकी प्रकृति उस लेन-देन से भिन्न रहती है जो दो भिन्न देशों के बीच किया जाता है। जैसे कि एक ही देश में विनिमय की इकाई उसी देश की मुद्रा रहती है, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय लेन-देन में विदेशी विनिमय का प्रश्न उपस्थित हो जाता है। **प्रो. हैरड** के अनुसार, यद्यपि इन दोनों लेन-देनों में अन्तर होता है, किन्तु उन्हें कठोरता से पृथक नहीं माना जा सकता। इसका कारण यह है कि बाह्य आर्थिक दशाएं न केवल हमारे आयात और निर्यात को प्रभावित करती हैं वरन् हमारे घरेलू मामलों पर भी उक्त दशाओं का व्यापक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, विनिमय में होने वाले उच्चावचन देश के आन्तरिक कीमत स्तर को भी किसी न किसी सीमा तक प्रभावित करते हैं।

उक्त आधार पर कहा जा सकता है कि हम जिन सिद्धान्तों का अध्ययन सामान्य अर्थशास्त्र में करते हैं, वे बहुत अंशों में अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र पर भी लागू होते हैं। अतः अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र पृथक् शास्त्र न होकर सामान्य अर्थशास्त्र की ही एक शाखा है।

अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की विषय-सामग्री एवं क्षेत्र
(SUBJECT-MATTER AND SCOPE OF INTERNATIONAL ECONOMICS)

यह स्पष्ट किया जा चुका है कि अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र कोई पृथक् शास्त्र न होकर सामान्य अर्थशास्त्र की ही एक शाखा है अतः इस विवाद में पड़ना महत्वहीन है कि अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एक कला है अथवा विज्ञान। इस विषय की प्रकृति इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि इसके अन्तर्गत किन अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का उदय हुआ है तथा उनका विश्व की अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव हुआ है। जहां तक इसके क्षेत्र का प्रश्न है, यह अत्यधिक व्यापक है एवं इसमें निरन्तर विकास हुआ है। इसके क्षेत्र में उस सम्पूर्ण ज्ञान का समावेश किया जा सकता है जिसका अध्ययन इसके अन्तर्गत किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध में वाणिज्यवादियों से लेकर आधुनिक अर्थशास्त्रियों; जैसे **ओहलिन**, **एल्सवर्थ**, **हेबरलर**, **हैरड**, आदि ने काफी विस्तार से व्याख्या की है। आज अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिस्थितियों में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में आर्थिक सहयोग के नये अध्यायों का सूत्रपात हो रहा है। यह इसी सहयोग का परिणाम है कि अर्द्धविकसित देश आज विकसित देशों से मशीनों, पूंजी एवं तकनीक का आयात कर रहे हैं तथा विकसित देश भी इन देशों के आर्थिक विकास में अभिरुचि ले रहे हैं।

जहां तक अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की विषय-सामग्री का प्रश्न है, अध्ययन की सुविधा के लिए इसे अग्र पांच भागों में विभाजित किया जाता है :

(1) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सिद्धान्त**—इसके अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विभिन्न सिद्धान्तों का अध्ययन किया जाता है तथा यह देखा जाता है कि उनमें क्या कमियां रही हैं एवं उन सिद्धान्तों में कौन-कौनसे संशोधन किये गये हैं। उदाहरण के लिए, तुलनात्मक लागत के सिद्धान्त का प्रतिपादन किस प्रकार **डेविड रिकार्डो** द्वारा किया गया एवं बाद में उसमें कौन-से संशोधन किये गये।

(2) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मौद्रिक पहलू**—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ने विदेशी भुगतान की समस्या को जन्म दिया है जिससे यह आवश्यक हो गया है कि दो विभिन्न राष्ट्रों की मौद्रिक इकाइयों के बीच विनिमय की दर निर्धारित की जाय। इससे सम्बन्धित और भी समस्याएं हैं जैसे भुगतान की समस्या को जन्म दिया है जिससे यह आवश्यक हो गया है कि दो विभिन्न राष्ट्रों की मौद्रिक इकाइयों के बीच विनिमय की दर निर्धारित की जाय। इससे सम्बन्धित और भी समस्याएं हैं; जैसे भुगतान सन्तुलन, विनिमय नियन्त्रण, विभिन्न मौद्रिक मान, क्रय-शक्ति समता निर्धारण करने की समस्या, इत्यादि। इन सबका अध्ययन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की मौद्रिक समस्याओं के अन्तर्गत किया जाता है।

(3) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और वाणिज्यिक नीति**—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध में एक राष्ट्र जो व्यावहारिक नीति अपनाता है, उसे वाणिज्यिक नीति (Commercial Policy) कहते हैं। जैसे आज यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया है कि एक राष्ट्र मुक्त व्यापार की नीति अपनाये अथवा विभेदात्मक संरक्षण का सहारा ले। संरक्षण

के अन्तर्गत आयात के अध्यंश (Quota) निर्धारित कर दिये जाते हैं। इसी प्रकार तटकरों के सम्बन्ध में व्यापारिक समझौतों का अध्ययन भी वाणिज्यिक नीति के अन्तर्गत किया जाता है।

(4) **अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग**—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने एवं उससे सम्बन्धित समस्याओं का हल करने के लिए आज कई अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं सहयोग कर रही हैं; जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन (WTO) आदि। अन्तर्राष्ट्रीय तरलता (International Liquidity) के प्रश्न को भी काफी महत्वपूर्ण बना दिया है क्योंकि बिना तरलता के विदेशी भुगतान सम्भव नहीं है। इसके साथ ही विदेशी व्यापार के कारण पैदा होने वाली आर्थिक समस्याओं को हल करने के लिए विभिन्न सम्मेलन भी आयोजित किये जाते हैं, जैसे—अंकटाड (United Nations Conference on Trade and Development)। इनका अध्ययन भी आर्थिक सहयोग के अन्तर्गत किया जाता है।

(5) **विदेशी व्यापार की संरचना एवं दिशा**—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रत्येक देश लिए दो बातें महत्वपूर्ण हैं—एक तो उसके आयात-निर्यात की प्रमुख वस्तुएं कौन-सी हैं और दूसरे, उस देश का व्यापार विश्व के कौन-से देशों से हो रहा है। प्रत्येक देश इस बात के लिए प्रयत्नशील रहता है कि उसके निर्यातों की संख्या बढ़े तथा विश्व में वह अपने बाजार को बढ़ा सके। इन सबका प्रभाव उस देश के भुगतान सन्तुलन पर पड़ता है। इसके अन्तर्गत हम किसी निश्चित काल में एक देश की व्यापारिक प्रवृत्तियों का अध्ययन करते हैं।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र में मुख्य रूप से उपर्युक्त पांच शाखाओं का अध्ययन किया जाता है।

महत्वपूर्ण प्रश्न एवं उत्तर-संकेत

1. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र से आप क्या समझते हैं? क्या इसे सामान्य अर्थशास्त्र की शाखा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है?
2. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की परिभाषा दीजिए एवं स्पष्ट कीजिए कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ने किन आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है?

   [**संकेत**—यह बताइए कि अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक लेन-देनों का अध्ययन किया जाता है। फिर बताइए कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ने अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक समस्याओं, क्षेत्रीय बाजारों एवं गरीब देशों की आर्थिक विकास की समस्याओं को जन्म दिया है।]
3. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र के क्षेत्र एवं विषय-सामग्री की विवेचना कीजिए।